तिब्बत के लिए
पांच-सूत्री-शांति-योजना

परम पावन दलाई लामा, तेनजिन ग्यात्सो

भूमिका

वर्तमान सदी के ढलते इन वर्षों में बहुत कुछ तेज़ी से घट रहा है। 21 वीं सदी की दहलीज पर खड़े हम सहमें हुए परन्तु फिर भी आशातीत नज़रों से उन शक्तियों व महान् विभूतियों के महान् प्रयासों को देख रहे हैं, उनसे जुड़ना चाह रहे हैं जो हमारे इस नक्षत्र पृथ्वी को शान्त एवं सुन्दर रखना चाहते हैं। अशान्ति, युद्ध व उसकी विभिषिका अस्थिरता इत्यादि एक तरफ मानवता को तथा उसके मासूम दिल को दहलाते हैं। दूसरी तरफ गिनी चुनी महान् हस्तीयों के अदम्य प्रयास इस पृथ्वी पर मानवता के काँपते दिल को अपनी अंजुली में सहेज सांत्वना देते हैं।

परम पावन दलाई लामा जी का यूरोपियन पार्लिमैंट में घोषित स्ट्रासबर्ग-शाँति-प्रस्ताव एक ऐसी ही पृथ्वी का सपना है जिसकी तलाश मानवता को सदैव से है। अपने झगड़ों, विरोधों को परस्पर बैठ, स्नेह भावना से निपटा पाना, आने वाली अपनी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक पर्यावरण में, आधुनिकिकरण में मुस्कुराती पृथ्वी की धरोहर छोड़ना, यही है इस शाँति प्रस्ताव के उद्देश्य।

स्ट्रासबर्ग प्रस्ताव जब पेश किया गया था तबसे लेकर आज तक विश्व में कितना कुछ घट चुका है। बर्लिन-दीवार का टूटना, रुमानिया, चैकोस्लोवाकिया, पोलैंड से साम्यवाद का खात्मा, बुश-गोबाचोव शिखर वार्त्ता और इन सबके बीच एक ताज़ा नासूर इन्सानियत के जिस्म पर। लोकतंत्र की ताज़ा हवाओं को तरसते चीनी विद्यार्थीयों का चियाननमान चौंक में चीन के आखिरी साम्यवादी जल्लादों द्वारा नृशंस कत्ल। साथ ही साथ दलाई लामा जी को उनके शांति-प्रयासों, अहिंसा के दर्शन द्वारा पृथ्वी को सुखी एवं ठंडा रखने के लिये सन् न्वासी का नोबेल पुरस्कार।

किसी भी राष्ट्र द्वारा एक छोटे, शाँतिप्रिय राष्ट्र पर बलात् कब्जा कर लेने से, वहाँ पर लाखों की संख्या में अपनी जनसंख्या बसा देने से इतिहास तो नहीं बदल जाता। दुर्भाग्य से चीनी शासक अभी भी ऐसा ही सोचते हैं। अपने देश से दूर निष्कासन में परम पावन दलाई

लामा जी तथा उनकी सरकार के नेतृत्व में हम एक ऐसे महान् राष्ट्र में रह रहे हैं जिसने हमें प्यार दिया, सहयोग दिया, सहायता दी। तथा उस सबसे बढ़ कर दिए, प्रेरणा तथा मनोबल अपने स्वतन्त्रता-संघर्ष उदाहरण से।

परम पावन दलाई लामा जी का स्ट्रासबर्ग-शाँति-प्रस्ताव, उस पर चल रही अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रिया तथा साथ ही साथ तिब्बत के सम्बन्ध में भारत की महान् हस्ती सरदार वल्लभ भाई पटेल का प्रधानमन्त्री नेहरु जी को एक असाधारण पत्र, हिन्दी में पुनः प्रकाशित करते समय मैं हार्दिक सन्तोष अनुभव कर रहा हूं। यह पुस्तिका हमारे भारतीय बहनों भाईयों के उन अनेकोंनेक पत्रों का परिणाम भी है जो हमें गुज़रे महीनों में लिख कर अनुरोध करते रहे हैं।

आशा है कि वे सब तथा आप भी इसे हिन्दी में पढ़कर लाभान्वित अनुभव करेंगे।

आपका,

सोनम तोपग्याल
सचिव
इन्फर्मेशन एवं इन्टरनेशनल रिलेशन्स विभाग
केन्द्रीय तिब्बती सचिवालय
गंगचेन किशोंग, धर्मशाला, हि.प्र.
176215 (भारत)

तिब्बत के लिए पांच सूत्री शांति योजना

दुनिया ज़्यादातर एक दूसरे पर आश्रित है तथा स्थाई रूप से राष्ट्रीय, प्रादेशिक तथा विश्व सम्बन्धी शाँति-तभी प्राप्त की जा सकती है यदि हम अपनी सोच को विस्तृत-हितों के सन्दर्भ में ढालें न कि संकीर्ण ज़रुरतों के आधार पर। आज यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि हम सभी कमज़ोर एंव शक्तिशाली, अपना अपना योगदान दें। मैं, तिब्बती लोगों के नेता तथा एक बौद्ध-भिक्षु की हैसियत से, जो एक ऐसे धर्म के सिद्धाँतों के प्रति समर्पित है, जिसका आधार प्रेम एंव करुणा भावना है और इन सबसे हटकर यहाँ एक भी इन्सान के नाते भी आया हूं, जिसकी नियती, आपके तथा अन्य भाईयों बहनों के साथ इस पृथ्वी पर इक्ट्ठा रहना है। जैसे-जैसे दुनिया छोटी होती जा रही है, हमें एक दूसरे की पहले से भी कहीं ज्यादा ज़रूरत है। यह सच है कि विश्व के हर कोने में इस ज़रुरत को अनुभव किया जा रहा है, उस महाद्वीप में भी जिससे मैं सम्बन्धित हूं।

अन्य क्षेत्रों की तरह, एशिया में भी वर्तमान समय में स्थिति अत्यन्त गम्भीर है। मिडल-ईस्ट में, साऊथ-ईस्ट में तथा मेरे अपने देश तिब्बत में लड़ाई व तनाव खुलेआम है। बहुत हद तक यह समस्याएं उन तनावों के लक्षण हैं जो इस क्षेत्र की महाशक्तियों के अन्दर ही अन्दर पनप रहे हैं। प्रादेशिक झगड़ों को सुलझाने के लिए किसी ऐसे उपाय, ऐसे दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो आसपास के राष्ट्रों, लोगों चाहे वे थोड़े हैं या ज्यादा के अनुरुप हो, सबके हित में हो। अन्यथा जब तक समस्या के विस्तृत उपायों की कोई ऐसी व्यवस्था नहीं हो जाती जिसमें उन लोगों की आशाओं का विशेष ध्यान रखा गया हो, जो मूलतः उनसे सम्बंधित हैं, कोई हित नहीं होगा। अस्थाई समाधानों एवं संकीर्ण हितों के लिए ही यदि हम समस्याएं सुलझाते रहे तो आगे चल कर और भी अधिक समस्यांए पैदा होगीं।

तिब्बती लोग प्रादेशिक एवं विश्व शाँति में अपना योगदान देने

को उत्सुक हैं और मैं विश्वास करता हूं कि वो ऐसा करने की अपूर्व स्थिति में हैं। परम्परा से ही तिब्बती लोग शांतिप्रिय एवं अहिंसक हैं। पिछले एक हज़ार से भी ज्यादा वर्षों से, तिब्बत में बौद्ध-धर्म का अनुसरण हो रहा है जिसकी वजह से सभी तिब्बती प्रत्येक जीव के प्रति करूणा एवं अहिंसा की भावना रखते हैं। यही भाव हमारे अपने राष्ट्र के अन्तर्राष्ट्रीय-सम्बन्धों में भी अनुभव किया जा सकता है। तिब्बत, सामरिक कूटनीति के आधार पर एशिया के ठीक मध्य में एक ऐसे स्थान पर विद्यमान है जहां वह इस महाद्वीप की तीन महाशक्तियों-भारत, चीन एवं सोवियत रूस को अलग अलग करता है, उसकी ऐसी नाजुक एवं महत्वपूर्ण स्थिति ने उसे एक ऐतिहासिक भूमिका में बांध रखा है जिससे वह उस क्षेत्र में शांति एवं स्थिरता बनाए रखे। कोई शक नहीं कि इसी कारण एशिया के साम्राज्य एक दूसरे को तिब्बत से बाहर ही रखने में प्रयत्नशील रहते थे। सो उस क्षेत्र की शांति व्यवस्था एवं स्थिरता के लिए वहां कि महाशक्तियों के मध्य में एक स्वतन्त्र तिब्बत का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण था। जब नव-निर्मित चीनी लोकतन्त्र ने 1949-50 में तिब्बत पर हमला किया तो उसने युद्ध व झगड़े का नया स्रोत बना लिया। यह और उग्र रुप से खुल कर सामने आया जब चीनियों के खिलाफ तिब्बती राष्ट्र विद्रोह तथा मेरे वहाँ से 1959 में भाग निकलने के बाद, भारत एवं चीन के बीच स्थितियां खूब तनावपूर्ण होती गईं जिनका परिणाम 1962 की लड़ाई थी जो मात्र सीमा को लेकर चीन ने छेड़ी थी। आज फिर से असंख्य सैनिक हिमालय की सीमा के दोनों ओर तैनात हैं और तनातनी बढ़ती ही जा रही है। वास्तविक मुद्दा कतई भी भारत-तिब्बत सीमा निर्धारण का नहीं है। वास्तविक मुद्दा है, चीन का तिब्बत पर गैरकानूनी अधिकार जिससे चीन को भारत की दहलीज तक आने का सीधा रास्ता मिल गया है। चीनी अधिकारियों ने तिब्बत के विषय को यह दावा कर उलझाने की कोशिश की है कि तिब्बत तो सदैव ही से चीन का हिस्सा रहा है। यह सच नहीं है। तिब्बत, चीन की पीपुल्ज़-आर्मी के 1949-50 में घुसने तक एक स्वतन्त्र राष्ट्र था।

एक हज़ार साल पहले से, जब तिब्बती शासकों ने तिब्बत का एकीकरण किया, तब से लेकर इस शताब्दी के मध्य तक हमारा देश

अपनी स्वतन्त्रता को बरकरार रखता आया है। इस दौरान कुछ समय तो ऐसे भी थे जब तिब्बत का प्रभाव, अधिपत्य पड़ोसी राज्यों, पर भी था और इसी दौरान तिब्बत भी थोड़े समयों के लिए अन्य विदेशी शासकों के प्रभाव तले रहा, जैसे मंगोलों का खान वशं, नेपाल का गुरखावशं, माँचू शासक तथा भारत स्थित ब्रिटिश सरकार।

चीन का हमला, जिसकी विश्व के हर देश ने निन्दा की थी, अन्तर्राष्ट्रीय कानून का ज्वलन्त एवं कुख्यात उल्लघंन था। अब भी जब चीन की तिब्बत पर फौजी हकूमत जारी है दुनिया को यह याद रखना होगा कि यद्यपि तिब्बतवासियों की अपनी आज़ादी छीन ली गई, परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत तिब्बत आज भी गैरकानूनी अधिकार में पिसता हुआ एक स्वतन्त्र राष्ट्र है।

मेरा उद्देश्य यहां तिब्बत की स्थिति पर कोई राजनैतिक या कानूनी बहस करने का कतई नहीं है। मैं सिर्फ उस स्पष्ट एवं विवाद-हीन तथ्य को दृढ़ता से, बिना किसी शक की गुंजाईश के कहना चाहता हूं कि तिब्बती लोगों की अपनी पृथक पहचान है, अपनी विशेष सभ्यता है विशेष धर्म तथा विशेष इतिहास के साथ। यदि आज चीन का कब्जा न हुआ होता तिब्बत प्राकृतिक ढंग से एशिया की महाशक्तियों के बीच एक स्वतन्त्र एवं शांतिप्रिय मध्यवर्तीय क्षेत्र (बफरज़ोन) की अपनी स्वभाविक भूमिका निभा रहा होता।

मेरी यह वास्तविक इच्छा है कि सारे तिब्बत देश को, जिसमें तीन सूबे यू-त्सांग, ख़म तथा आम्दो हैं को स्थिरता, एकता तथा शान्ति के क्षेत्र में एक बार फिर से बदल कर उसे उसकी अनमोल भूमिका वापिस दी जानी चाहिए। इस ढंग से तिब्बत, बुद्ध धर्म की अद्वितीय परम्परा के आधार पर उन सभी लोगों, देशों को अपनी निस्वार्थ सेवाएं, अपना आतिथ्य देगा जो समूची मानव जाति, विश्वशान्ति तथा अपने आस-पास के प्राकृतिक क्षेत्र के हित में कार्यरत हैं।

बीत चुके दशकों में हम से हमारी आज़ादी छीन ली गई और हमें कठोर यातनाओं में पीसा गया है। इनके दौरान मैंने चीनियों के साथ सीधा वार्तालाप कर इस समस्या का हल ढुंढने का प्रयत्न किया। सन् 1982 में चीन में जब काफी नेता बदले और पेकिंग

सरकार से सीधे सम्बन्ध कायम हुए, अपने देश अपने लोगों के भविष्य सम्बन्धी मसलों को लेकर मैंने अपने प्रतिनिधि पेकिंग भेजे। हमने बातचीत की शुरूआत बड़े ही आशावादी एवं स्पष्ट ढंग से की थी जिसमें चीनी गणतत्रं की उचित ज़रूरतों को भी ध्यान में रखा हुआ था। मेरी ऐसी आशा थी कि चीनी अधिकारी हमारी ऐसी ईमानदार एवं सरल भावनाओं का जवाब भी वैसे ही ढंग से देंगे और कोई न कोई ऐसा समाधान निकल ही आएगा जिसमें दोनों पक्षों का ज़्यादा से ज़्यादा हित होगा। दुर्भाग्यपूर्ण, चीन ने लगातार हमारी ऐसी कोशिशों के प्रति बड़ा ही रक्षात्मक रवैया अपनाया है और जब भी हमने तिब्बत में पेश आ रही कठिनाईयों का ज़िक्र किया, उन्हें लगा कि हम अकारण ही उनकी आलोचना कर रहे हैं।

हमें और भी हताश होना पड़ा, जब चीनी सरकार ने एक ऐसे अवसर का दुरुपयोग किया जिसके आधार पर एक निष्कपट एवं सरल सा वार्तालाप शुरु किया जा सकता था। तिब्बत के साठ लाख लोगों से सम्बन्धित विषयों को सुलझाने की बजाए चीन सरकार ने तिब्बत प्रश्न को मात्र मेरे निजी दर्जे (स्टेट्स) के प्रश्न जितना छोटा बना दिया।

इस पटाक्षेप में तथा उस अपूर्व समर्थन एवं प्रेरणा के जवाब में, जो मुझे आपसे मिली है, मैं उन मुख्य विषयों को स्पष्ट करना चाहूंगा तथा समझौता भावना, खुले मन से एक प्रस्ताव पेश करना चाहूंगा जो एक स्थाई समाधान की दिशा में पहला कदम होगा। मैं आशा करता हूं कि यह प्रस्ताव/शांति योजना हमारे पड़ोसियों में, हममें मैत्री तथा सहयोग भरे भविष्य का शुभारंभ करेगा, हमारे पड़ोसी चीनियों के साथ भी। इस शांति योजना के पांच मूल हिस्से हैं :—

1. **सम्पूर्ण तिब्बत का एक शांति क्षेत्र में परिवर्तित किया जाना।**

2. **चीन द्वारा तिब्बत में अपनी जनसंख्या स्थानान्तरण की नीति का परित्याग, जिससे तिब्बतियों के मूल अस्तित्व को खतरा है।**

3. **तिब्बती जनता के आधारभूत मानवाधिकारों तथा गणतांत्रिक स्वतंत्रता के प्रति सम्मानजनक दृष्टिकोण।**

4. तिब्बत की प्राकृतिक सम्पदा का विकास व रक्षा। चीन द्वारा तिब्बत की भूमि पर परमाणु हथियारों के निर्माण तथा परमाणु कचरा फैंकने पर रोक।

5. तिब्बत के भविष्य व चीनियों के भविष्य में परस्पर सम्बंधों पर गम्भीर विचार विमर्श की व्यवस्था।

इन पांचों हिस्सों की व्याख्या इस तरह है

□ 1 □ सम्पूर्ण तिब्बत, तिब्बत के पूर्ववर्ती प्रान्तों-जिनमें ख़म और आम्दो आदी भी हैं सहित सबको अहिंसा-क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया जाए।

इस तरह के शाँतिक्षेत्र के स्थापित होने से, जो तिब्बत की ऐतिहासिक भूमिका के परम्परागत ही होगा एक शाँतिप्रिय, तटस्थ बुद्धिस्ट राष्ट्र तिब्बत, महाद्वीप की महाँशक्तियों के बीच फैला हुआ एक आर्दश मध्यवर्त्तीय क्षेत्र फिर से बन सकेगा। यह नेपाल द्वारा प्रस्ताविक उसे एक स्थाई शाँति क्षेत्र में परिर्वतित करने के प्रस्ताव के अनुरूप भी होगा जिसे चीन समर्थन देने की घोषणा कर चुका है। नेपाल के उस प्रस्ताव का प्रभाव और भी अधिक होगा यदि उसमें तिब्बत तथा पड़ोसी क्षेत्र भी सम्मिलित कर दिए जाएं।

तिब्बत शांति क्षेत्र की स्थापना के लिए चीन की फौज तथा फौजी छावनियों का वहां से हटाया जाना होगा। इस से भारत भी अपने हिमालयी क्षेत्रों जो तिब्बत से लगते हैं से अपनी सेनाएं हटा सकेगा। यह एक अर्न्तराष्ट्रीय समझौते के अर्न्तगत होगा जिसमें चीन की सुरक्षा सम्बंधी न्यायसंगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाएगा। इससे तिब्बती, भारतीय एवं चीनी लोगों के आपसी स्नेह एवं विश्वास को बढ़ावा मिलेगा। यह सभी के बेहतरीन हितों को ध्यान में रख कर प्रस्तावित किया गया है, विशेष कर चोन तथा भारत के। इससे उनकी सुरक्षा स्थिति भी बेहतर बनेगी और इतनी सारी फौजों को उस हिमालयी सीमा पर रखने से जो भारी आर्थिक बोझ पड़ता रहा है वह एकदम कम हो जाएगा।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो चीन व भारत के सम्वधों में में कभी तनाव नहीं था। केवल उस समय जब चीनी सेनाएं तिब्बत में

घुसीं जिसके परिणामस्वरूप एक सामान्य सीमा बन खड़ी हुई, दोनों राष्ट्रों में तनाव बढ़ने लगे जिनकी वजह से 1962 का युद्ध हुआ। तब से अनेकों भयंकर घटनाएं घटती ही जा रही हैं। इस विश्व के सबसे अधिक जनसंख्या वाले राष्ट्रों में बेहतर सम्बन्धों की स्थापना को बड़ी सहायता मिलेगी यदि दोनों अलग-अलग एक दूसरे से परे रह सकें, जैसा को इतिहास में वह रहते आ रहे थे। एक विशाल तथा निष्पक्ष मध्यवर्त्ती क्षेत्र तिब्बत के दोनों छोरों पर।

तिब्बती तथा चीनी लोगों के परस्पर सम्बन्धों में बेहतरी लाने में पहली आवश्यकता विश्वास जटाने की है। पिछले तीन दशकों की बरबादी में दस लाख तिब्बतियों की जानें गई जो हमारी कुल जनसंख्या का 6वां हिस्सा है तथा ज़्यादा नहीं तो इतने ही जेलों, लेबरकैम्पों में अपने धार्मिक विश्वासों तथा स्वतन्त्रता से प्रेम की खातिर, ऐड़ियां रगड़ते रहे। सो चीनी सेना के वापिस हटाए जाने से ही परस्पर समझौते की प्रक्रिया आरम्भ हो सकती है। तिब्बत में इतनी विशाल सेना की उपस्थिति, वहां के तिब्बतियों के लिए प्रति-दिन उन यातनाओं, आंतक तथा शोषण की याद को ताज़ा करती है जो उन्होंने सहे हैं। सेना की वापसी एक आवश्यक संकेत होगा कि चीनियों के साथ भविष्य में सार्थक सम्बन्ध, मैत्री तथा विश्वास के आधार पर स्थापित किए जा सकते हैं।

□ 2 □ तिब्बत में अपनी जनसंख्या स्थानान्तरण की नीति जिसे पेकिंग सरकार तिब्बत समस्या के "अंतिम-समाधान" के रूप में जबरन ठोस रही है ताकि उसके परिणामस्वरूप तिब्बती जनसंख्या इतनी कम हो जाए कि वह महत्वहीन अल्पसंख्यक बन कर जाएं जिन्हें किसी भी महत्वपूर्ण निर्णय में बोलने कहने का हक ही न हो। चीन अपनी इस नीति को एक दम रोके।

चीनी नागरिक-जनता का तिब्बत में इतने विशाल स्तर पर स्थानान्तरण चौथी जेनिवा कान्वेंशन 1949 का भी उल्लंघन है तथा तिब्बतियों के अपने अलग तथा अनोखे अस्तित्व को ही खतरे में डालता है। हमारे देश के पूर्ववर्ती भागों में चीनी हम तिब्बतियों से कई गुना ज्यादा हो गए हैं। उदाहरणस्वरूप आम्दो प्रांत में जहाँ मैं पैदा हुआ था,

चीनी आंकड़ों के अनुसार 20 लाख से भी ज्यादा चीनी हैं जबकि उनके मुकाबले में वहां केवल 7 लाख ही तिब्बती हैं। तथाकथित क्षेत्र तिब्बत-ऑटोनोमस-रिजन, केन्द्रीय तथा पश्चिमी तिब्बत में भी चीन के सरकारी आँकड़े बताते हैं कि वहाँ चीनी, तिब्बतियों से अधिक हो गए हैं।

चीन की जनसंख्या स्थानान्तरण की नीति कोई नई नहीं है। इसे योजनाबद्ध ढंग से अन्य क्षेत्रों पर लागू किया गया था। इस सदी के आरम्भ में माँचू एक विशिष्ट कौम थी, इनकी अपनी विशिष्ट परम्परा तथा संस्कृति थी। आज के मांचूरिया में केवल 20 या 30 लाख मांचूरियन शेष बचे हैं तथा वहां 75 लाख चीनियों को बसा दिया गया है। पूर्वी तुर्कीस्तान में जिसे चीनी अब सिं-क्यांग कहते हैं, चीनी जनसंख्या 2 लाख से बढ़ कर 70 लाख हो गई है, वहाँ की कुल 130 लाख की जनसंख्या के आधे से भी अधिक। अपने उपनिवेशवादी विस्तार के तहत अन्दूरनी मंगोलिया में भी चीनियों की जनसंख्या 80.5 लाख है जबकि मंगोल वहां केवल 20.5 हैं।

आज सारे तिब्बत के अन्दर 70 लाख से भी ज्यादा चीनियों को बसा दिया गया है, यह तिब्बत की 60 लाख की कुल जनसंख्या से कहीं ज्यादा है। केन्द्रीय तथा पश्चिमी तिब्बत में जिसे चीनी "तिब्बत-ऑटोनोमस-क्षेत्र" कहते हैं, चीनी अधिकारी स्वीकारते हैं कि वहाँ के लगभग 10.9 लाख तिब्बती वाकई अल्पसंख्यक हो कर गए हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इन आँकड़ों में चीनी फौज की संख्या कतई नहीं जो तिब्बत में स्थित है, इसकी संख्या 3 से 5 लाख के बीच है— इनमें से ढाई लाख तो तथाकथित तिब्बत-ऑटोनोमस-क्षेत्र में तैनात हैं।

यदि तिब्बतियों को सामान्य लोगों की तरह रहना है तो आवश्यक है कि चीनी जनसंख्या स्थानान्तरण को एकदम रोक दिया जाए तथा जो बस गए हैं उन्हें वापस भेजा जाए। अन्यथा तिब्बती जल्दी ही टूरिस्टों के लिए एक आकर्षण सा ही बन कर रह जाएंगे। पुराने वक्तों की कोई पुरानी चीज़।

□ 3 □ तिब्बतियों के मौलिक मानवाधिकारों तथा गणताँत्रिक स्वतन्त्राओं का तिब्बत में सम्मान होना चाहिए। तिब्बतवासी संस्कृति, आर्थिक, बौद्धिक, धार्मिक रूप से अपना विकास करने में तथा अपनी मूल गणताँत्रिक आज़ादी का प्रयोग करने में स्वतन्त्र हों।

तिब्बत में मानवाधिकारों के उल्लंघन का उदाहरण विश्व में सबसे गम्भीर है। तिब्बत में रंग-भेद कार्यक्रम के अन्तर्गत भेद भाव को बढ़ावा दिया जा रहा है जिसे चीनी "अलग करके बाद में मिलाओ" का नाम देते हैं। भद्रता से यदि कहा जाए तो तिब्बती अपने ही देश में बेगाने, घटिया नागरिक बन कर रह गए हैं। अपने मूल गणतांत्रिक अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं से वंचित, वह उपनिवेशवादी व्यवस्था तले रह रहे हैं जहां वास्तविक सत्ता केवल उन चीनी अधिकारियों के हाथ में है जो काम्युनिस्ट पार्टी या सेना से सम्बन्धित हैं।

यद्यपि चीनी सरकार ने तिब्बतियों को, कुछ ध्वस्त बुद्धिस्ट मोनेस्ट्रीज़ (मन्दिरों) को फिर से बनाने तथा वहाँ पर पूजा इत्यादि की अनुमति दी है, परन्तु फिर भी वह धर्म के गम्भीर अध्ययन तथा शिक्षा पर अंकुश लगाए हुए हैं। केवल मुठी भर भिक्षु ही, जिन्हें काम्युनिस्ट पार्टी चुनती और अनुमति देती है इन मठों में धार्मिक अध्ययन के लिए आ सकते हैं।

एक ओर निष्कासन में रह रहे तिब्बती, अपने गणताँत्रिक अधिकारों का प्रयोग मेरे द्वारा 1963 में घोषित संविधान के अन्तर्गत कर रहे हैं, दूसरी ओर मेरे हज़ारों देशवासी तिब्बत में केवल अपने धार्मिक एवं राजनैतिक दृढ़ विश्वासों के कारण जेलों तथा यातना-शिविरों में जाने कब से घोर यातनाओं में हैं।

□ 4 □ तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण के पुनः सुधार के लिए गम्भीर प्रयास किए जाने चाहिएं। परमाणु अस्त्रों के निर्माण व परमाणु कचरे को ठिकाने लगाने के लिए तिब्बत की धरती के इस्तेमाल पर फौरन रोक लगाई जानी चाहिए।

तिब्बती हर प्रकार के जीव के प्रति आदर भाव रखते हैं। यह स्वाभाविक भावना बुद्धिस्ट आस्थाओं में से विकसित हुई जिसके अन्तर्गत

चेतना-युक्त सभी जीवों को चोट पहुंचाना निषेध है, चाहे वह मानव हो या पशु। चीनियों के आक्रमण से पूर्व तिब्बत एक मंगलमय सुरक्षित वन जैसा था जिसका प्राकृतिक वातावरण एकदम अनोखा था। दुख है कि पिछले कुछ दशकों में तिब्बत के जंगल, खनिज व जंगल-प्राणी सभी सम्पदाओं को चीनिओं ने भरपूर तबाह किया है। इससे तिब्बत के नाजुक पर्यावरण पर दुष्प्रभाव पड़ा है। अब जो थोड़ा बहुत बचा है उसे बचाया जाना चाहिए तथा प्रयास किए जाने चाहिएं कि उसके पर्यावरण को उसी तरह से पुनः बहाल किया जाए।

चीन तिब्बत का इस्तेमाल परमाणु हथियार बनाने के लिए भी करता है तथा हो सकता है कि उनसे उत्पन्न परमाणु-कचरे को अब उसने तिब्बत ही में गाढ़ना आरम्भ कर दिया हो। चीन अपने परमाणु कचरे ही को ठिकाने नहीं लगाता बल्कि अन्य देशों के परमाणु कचरे को ठिकाने लगा उनसे पैसा भी कमाता है।

इससे उत्पन्न होने वाले खतरे एकदम प्रत्यक्ष हैं। आज की जीवित पीढ़ियों को ही नहीं, भविष्य में आने वाली पीढ़ियों को भी तिब्बत के पर्यावरण के प्रति इस चीनी उदासीनता से भारी खतरा है।

□ 5 □ भविष्य में तिब्बत का क्या दर्जा होगा तथा तिब्बती व चीनियों के परस्पर सम्बन्धों के प्रति एक ईमानदार वार्तालाप की शुरूआत।

हम इस विषय को व्यवहारिक तथा वास्तविक ढग से छूना चाहते हैं, समझौते तथा स्पष्टवादिता की भावना से जिसका केन्द्रीय उद्देश्य ऐसा हल ढूंढ़ना हो जो अन्ततः सभी के हितों के अनुकल हो, तिब्बतियों के, चीनियों के तथा इस प्रश्न से जुड़े सभी के। तिब्बती तथा चीनी दोनों ही विशिष्ट कौमें हैं। प्रत्येक का अपना ही इतिहास राष्ट्र, संस्कृति, भाषा तथा रहनसहन हैं। इस तथ्य को भी स्वीकारा व सत्कारा जाना चाहिए कि लोगों में भिन्नताएं भी होती हैं तथा उन की वजह से कभी वास्तविक सहयोग जो दोनों पक्षों के हितों में हो, की गति में बाधा नहीं आनी चाहिए। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि सम्बंधित पक्ष अपने भविष्य के बारे में गम्भीरता सौहृदयता में बैठ, खले दिमाग से विचार-विमर्श सच्ची इच्छा से करें तो कोई समाधान अवश्य

निकलेगा। सो हम सबको बुद्धिमता, ईमानदारी तथा स्पष्टवादिता का वरण कर इस सोच की ओर बढ़ना है।

एक निजी पहलू पर मैं अपनी बात को समाप्त करूंगा। आप लोगों को धन्यावाद देता हू कि आपने, आपके सहयोगियों सह-नारिकों ने सहानुभूति, सहयोग दिया है विश्व भर के सताए हुए दबाए हुए लोगों के प्रति। और आपने अपना समर्थन खुले आम दिया/दिखाया है उससे हमारे लोगों पर, हम पर अत्यन्त प्रेरणादायक असर हुआ है। मेरे देश के इन नाजुक, गम्भीर समयों में आपका समर्थन लगातार मिलता रहेगा इसका मैं निवेदन करता हूं।

धन्यवाद,

तेनज़िन ग्यात्सो,

चौदहवें दलाई लामा।
सितम्बर 21, 1987

पूज्य दलाई लामा जी का स्ट्रासबर्ग शान्ति प्रस्ताव

आज हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं जो ज्यादा से ज़्यादा एक दूसरे पर आश्रित है। एक राष्ट्रअपनी समस्याओं का समाधान स्वयं नहीं कर सकता। सारे विश्व के प्रति उत्तरदायित्व कि भावना के बिना, हमारा अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। इसी कारण मैं सदैव विश्वास करता आया हूं कि विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में एक दूसरे प्रति ज्यादा आदर भाव, परस्पर सहयोग तथा समझ होने की आवश्यकता है।

यूरोपियन पार्लिमैंट एक प्रेरणादायक उदाहरण है। युद्ध की वीभत्सता तथा तवाही के बाद वह जो कभी शत्रु थे, एक ही पीढ़ी में उन्होंने मिल जुल कर रहना, एक दूसरे से सहयोग करना भी सीख लिया है। इसलिए यूरोपियन पार्लिमैंट में आए हुए समूह को सम्बोधित करने में, मैं विशेष गर्व अनुभव कर रहा हूं।

जैसा कि आप को मालूम है, मेरा देश तिब्बत बड़े ही कठिन समयों में से गुजर रहा है। तिब्बती, विशेषकर वह जो चीनी कब्ज़े तले रह रहे हैं स्वतंत्रता, न्याय तथा स्वनिर्धारित भविष्य पाने के लिए आतुर हैं ताकि वह अपने अनोखे अस्तित्व को पूर्णतया सम्भाल सकें, ताकि वह पड़ोसी देशों के साथ शांतिपूर्ण ढंग से रह सकें।

एक हज़ार से भी अधिक वर्षों से हम तिब्बती, धार्मिक एंव पर्यावरण सम्बंधी मूल्यों से श्रद्धापूर्वक जुड़े रहे ताकि उस ऊंचे भूखंड पर, जहां हम रहते आए जीवन तथा प्रकृति का सूक्ष्म तालमेल बना रहे। यह सब भगवान बुद्ध की शिक्षाओं का फल था जिसमें दूसरों के प्रति करुण भाव, अहिंसा पर भरपूर ज़ोर दिया गया था तथा अपने पहाड़ों से सुरक्षित घिरे हम पृथ्वी के हर जीव के प्रति आदर भाव से ओत प्रोत युद्ध के विचार को अपनी राष्ट्रीय नीति में से ही निकाल कर रहते रहे।

हमारा इतिहास, जो 2000 सालों से भी पुराना है, स्वतंत्रता भरा है। सन् 127 (ईसा पूर्व) से, जब हमारे राष्ट्र की नींव डाली गई थी, अब तक हम तिब्बतियों ने अपनी प्रभुसत्ता (सौवरेनिटी) कभी नहीं खोई। हां, जैसा की दुनिया के अन्य राष्ट्रों के साथ भी हुआ, तिब्बत को कभी कभार अपने पड़ोसियों के प्रभाव तले रहने के अनुभव तो होते ही रहे जैसे मंगोल, मांचू, चीनी, ब्रिटिश तथा नेपाल के गोरखे। परन्तु ऐसे दौर बड़े संक्षिप्त से थे तथा इनके दौरान तिब्बती जनता को कभी भी ऐसा महसूस नहीं हुआ उनकी राष्ट्रीयता को ही ख़त्म कर दिया गया हो। ऐसे भी मौके आए जब तिब्बती शासकों ने चीन एवं पड़ोसी राष्ट्रों के विशाल इलाकों को जीता परन्तु इसका यह अभिप्राय कभी नहीं था कि जो इलाके हमने जीते थे उन पर अपना हक स्थाई ढंग से जताते।

सन् 1949 में चीनी गणतंत्र ने तिब्बत पर बलात् आक्रमण किया। तब से यह तिब्बती इतिहास का सब से अन्धकारमय समय रहा है। उस बलात् कब्ज़े के परिणामस्वरुप दस लाख से भी ज़्यादा तिब्बती मारे जा चुके हैं। हज़ारों मॉनेस्ट्रीज़ (बौद्ध मंदिर) का योजनाबद्ध तरीकों से विध्वंस किया गया है। तिब्बत में पूरी की पूरी एक पीढ़ी शिक्षा, आर्थिक सुविधाओं तथा अपनी राष्ट्रीय भावनाओं के बिना बड़ी हो चुकी है। यद्यपि वर्तमान चीनी नेताओं ने कुछ सुधार किए हैं परन्तु वह बहुत बड़े पैमाने पर अपनी चीनी जनता को तिब्बती क्षेत्र में बसा रहे हैं। उनकी इस नीति से तिब्बत में रह रहे साठ लाख तिब्बती अपने ही देश में अल्पसंख्यक हो कर रह गए हैं। सभी तिब्बतियों की ओर से बोलते हुए, मुझे अत्यन्त दुःख से आपको बताना पड़ रहा है कि हमारी त्रासदी अभी भी जारी है।

मैंने सदा अपने लोगों को अपनी व्यथाओं, यातनाओं की अभिव्यक्ति के लिए, हिंसात्मक ढंगों का प्रयोग न करना ही सिखाया है। फिर भी मेरा विश्वास है कि दुनिया के लोगों का यह नैतिक अधिकार है कि वह अन्याय का डट कर विरोध करें। दुर्भाग्यवश तिब्बत में हुए प्रर्दशनों को चीनी सेना ने चीनी नीति के तहत हिंसात्मक तरीकों से दबाया। मैं फिर भी अहिंसात्मक संघर्ष की सलाह ही दूंगा, परन्तु यदि चीनी सरकार अपने क्रूर ढंगों का परित्याग नहीं करती तो भविष्य

में स्थितियां और बिगड़ने के लिए तिब्बतियों को तो ज़िम्मेवार नहीं ठहराया जा सकता।

प्रत्येक तिब्बती अपने देश की आज़ादी की पूर्ण बहाली की आशा व प्रार्थना करता रहता है। हमारे हज़ारों देशवासियों की जानें इस संघर्ष में जा चुकी है तथा सारा का सारा हमारा देश, इस संघर्ष में बुरी तरह यातना ग्रस्त रहा है। यहां तक कि हाल ही के महीनों में, तिब्बतियों ने बहादुरी से इस अमूल्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपने प्राणों की आहुति दी है। दूसरी तरफ चीनी, तिब्बती लोगों की आकांक्षाओं को समझने में, पहचानने में एक दम असफल रहे हैं तथा क्रूर से क्रूरत्तम दबावों की नीति का मूर्खतापूर्ण अनुसरण करते ही जा रहे हैं।

लम्बे समय से मैं सोचता रहा हूं कि आखिर मेरे देश की यातना का वास्तविक समाधन क्या है? मेरी मन्त्री परिषद् और मैंने काफी मित्रों से विचार विमर्श किया, अपने संघर्ष में जुड़े लोगों के विचार सुने। परिणामस्वरुप सितम्बर 21, 1987 को वाशिंगटन डी. सी. में कांग्रेस-मानवधिकार-गुट (Congressional Human Rights Caucus, Washington D.C.) को सम्बोधित करते हुए मैंने तिब्बत के लिए पांच-सूत्रीय शाँति योजना की घोषणा की। इसमें मैंने तिब्बत को एक शाँति क्षेत्र में तबदील करने के लिए कहा, जहां मानवता एवं प्रकृति परस्पर तालमेल में रह सकें। मैंने मानवाधिकारों तथा गणतन्त्रिक आदर्शों के प्रति श्रद्धाभाव की मांग की तथा तिब्बती क्षेत्रों में चीनी जनसंख्या के बसाए जाने पर रोक लगाने को कहा।

इस शांति योजना का पांचवां सूत्र था, तिब्बतियों एवं चीनियों के बीच एक निष्कपट एवं ईमानदार बातचीत की शुरुआत। इस प्रकार हमने उन विचारों को आकार देकर यह शुरुआत की तथा हमें आशा है तिब्बत समस्या के समाधान के लिए इन्हें आधार माना जा सकता है। मैं इस अवसर पर यहाँ उपस्थित इस विशिष्ट सभा को इन मुख्य सूत्रों से सम्बन्धित अपनी सोच से अवगत कराना चाहूंगा।

सारा का सारा तिब्बत जिसे चोल्का-सुम (यु-त्साँग, खम तथा आम्दो) कहते हैं एक स्वशासित, प्रजातांत्रिक इकाई बना दिया जाना

चाहिए जो कानूनी आधार एवं लोगों की सर्वसम्मति पर आधारित हो। जिसमें सर्वहित, स्वरक्षा तथा पर्यावरण के प्रति आदर भाव हो—यह सब चीनी सरकार के सहयोग से किया जा सकता है।

चीन को लोकतांत्रिक सरकार, तिब्बत की विदेशी नीति का दायित्व सम्भाले। परन्तु तिब्बत की सरकार को अपने विदेशी प्रतिनिधियों के माध्यम से, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शिक्षा, पर्यटन, विज्ञान तथा खेलकूद इत्यादि जैसी अराजनैतिक गतिविधियों के विकास के लिए विदेशी सरकारों से निजी सम्बन्ध रखने का भी अधिकार हो। तिब्बत, ऐसे अर्न्तराष्ट्रीय सगठनों का सदस्य बन सकता है जो ऐसी गतिविधियों में पहले ही से जुड़े हुए हों।

तिब्बत की सरकार की स्थापना संविधान एवं मौलिक कानून के आधार पर होनी होगी। यह मौलिक कानून एक प्रजातांत्रिक सरकार की व्यवस्था करता हो। जिसका पूर्ण दायित्व लोगों को आर्थिक, सामाजिक समानता देना तथा पर्यावरण की सुरक्षा करना हो। अभिप्राय यह कि तिब्बत की सरकार को तिब्बती जनता से सम्बन्धित प्रत्येक मामले में निर्णय लेने एवं उसे साकार रुप देने का पूर्ण अधिकार होगा।

क्योंकि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता ही किसी समाज के विकास का स्त्रोत एवं साधन होती है, तिब्बत सरकार मानवाधिकारों के अर्न्तराष्ट्रीय चार्टर (Universal Declaration of Human Rights) के अधीन यह स्वतन्त्रता सभी नागरिकों को देगी। जिसमें बोलने इकट्ठा होने व धर्म सम्बन्धी सभी अधिकार होंगें। क्योंकि धर्म, तिब्बत की राष्ट्रीय पहचान का आधार है और धार्मिक मूल्य तिब्बत की अनोखी एवं अपूर्व संस्कृति का केन्द्र हैं तो तिब्बत सरकार का यह विशेष कर्त्तव्य होगा कि वह इस परम्परा की सुरक्षा एवं विकास करे।

इस सरकार का एक लोकप्रिय, चुना हुआ नेता होगा, एक द्विगृही लोक सभा तथा पूर्णतया स्वतंत्र न्यायालय होगा तथा इसका मुख्य कार्यालय ल्हासा में होगा। तिब्बत को सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था, तिब्बतवासियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रख उनके अनुकूल बनानी होगी, विशेषकर यह ध्यान भे रखते हुए कि पहले वहां की सारी जनसंख्या का जीवन स्तर ऊंचा उठाना है।

तिब्बत सरकार अपनी वनसम्पदा, वनस्पति तथा जंगल में रहने वाले पशुओं की सुरक्षा के लिए सख्त कानून बनाएगी। प्राकृतिक साधनों, खनिज सम्पदा का बड़े ध्यान से लाभ उठाया जाएगा। परमाणु, न्यूक्लिआई अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण, परीक्षण एवं रख रखाव पर पूर्ण पाबंदी होगी तथा ऐसी अन्य तकनीकों को हतोत्साहित किया जाएगा जिनके इस्तेमाल से विनाशकारी, हानिकारक कचरा निकलता है। तिब्बत सरकार का यह उद्देश्य रहेगा कि तिब्बत को इस नक्षत्र का सबसे शांत विशाल प्राकृतिक संरक्षित क्षेत्र बना रहने दिया जाए।

एक अ-फौजी इलाका बनने के बाद तिब्बत वास्तव में शांति क्षेत्र भी बन पाए इस उद्देश्य को साकार करने के लिए वहां एक क्षेत्रिय-शांति कान्फ्रेंस भी आयोजत करनी होगी। और जब तक यह शांति-कान्फ्रेंस का आयोजन सम्भव नहीं हो पाता, जब तक वहां से फौज पूर्णतया हटाई नहीं जाती, जब तक तिब्बत एक निष्पक्ष शांति क्षेत्र नहीं बन जाता, तब तक चीन उधर थोड़ी संख्या में फौजें रख सकता है जिनका उद्देश्य केवल किसी हमले से सुरक्षा करना ही होगा। सफल बातचीत के वातावरण को सौहृदय बनाने के लिए चीनी सरकार को चाहिए कि वह तिब्बत में अपनी मानवाधिकारों को कुचलने की नीति एक दम रोकें, अपनी चीनी जनसंख्या को तिब्बत में बसाने पर रोक लगाए।

यह हैं विचार जो हमारे दिमाग में हैं, मैं जानता हूं इनमें निहित नरम तेवर से बहुतेरे तिब्बती निराश होंगे। निस्संदेह आने वाले महीनों मे हमारें अपने समाज में अनेक तर्क विर्तक होंगे, तिब्बत के अंदर हमारे समाज में तथा तिब्बत से बाहर वाले निष्कासित समाज में भी। फिर भी किसी बदलाव की स्थितियां उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक एवं अमूल्य योगदान है। मेरा विश्वास है कि इन विचारों में वास्तविकता से जुड़े ऐसे साधन निहित हैं जिनमें तिब्बत की एक अलग, अनोखी पहचान को फिर से आधार मिलेगा, तिब्बतवासियों के मौलिक अधिकार फिर से बहाल होंगे तथा चीन के हित भी सम्भले रहेंगे। मैं फिर भी एक बात पर जोर देना चाहूंगा कि चीनियों के साथ बात चीत का चाहे कोई भी परिणाम निकले, अन्ततः तिब्बतवासी, तिब्बतियों की राय ही निश्चित मानी जाएगी इसलिए कोई भी विस्तृत योजना जो तिब्बतवासियों की आशाओं को जानने के लिए बनाई जाएगी, उसे देश व्यापि चुनाव द्वारा ही निश्चित किया जाएगा।

इस अवसर पर मैं यह कहना ज़रुरी समझता हूं कि तिब्बत सरकार में, मैं कोई भी सक्रिय भूमिका नहीं चाहता, न ही कोई गद्दी। फिर भी जितना मुझसे हो पाएगा और जब तक ज़रुरत होगी, मैं तिब्बत की खुशहाली, तिब्बतवासियों के हितों की सेवा करता रहूंगा। हम चीन की गणतांत्रिक सरकार को इन मुद्दों, जो मैंने अभी पेश किए हैं, पर एक प्रस्ताव पेश करने के लिए तैयार हैं। बातचीत के लिए, तिब्बती सरकार के एक प्रतिनिधि दल का चुनाव भी किया जा चुका है। हम चीनियों के साथ बातचीत के लिए तैयार हैं ताकि बातचीत कर इस प्रस्ताव के जरिए किसी ऐसे समाधान तक पहुंचा जा सके जो दोनों के बराबर हित में हो।

निरन्तर बढ़ रहे उस समर्थन और झकाव, जो हमें दुनिया की सरकारों, राजनैतिक नेताओं, जिनमें अमेरिका के भूतपूर्व प्रैज़िडैंट जिमी कार्टर भी हैं, तथा अनेकों अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से मिल रहा है, उससे हमें बड़ा साहस एवं प्रेरणा मिली है। चीन के भीतर आए बदलावों से, उन बदलावों के आने से वहां जो एक नया नेता-ग्रुप उभरा है, उससे भी हमें बड़ी आशा तथा प्रेरणा मिली है, जो उदारता एवं वास्तविकता के ज़्यादा करीब है।

हम चीनी सरकार तथा नेता मंडली को ज़ोर देकर कहते हैं कि वह मेरे विचारों पर ज़्यादा से ज़्यादा गम्भीरता से ध्यान दें। केवल बातचीत तथा तिब्बत की वास्तविकता को स्पष्ट एव ईमानदारी से देख भर लेने की इच्छा से ही किसी हितकारी समाधान तक हम पहुंच सकते हैं। हम चीनी सरकार के साथ अपने विचार विमर्श पूरी मानवता के हितों को ध्यान में रख कर करना चाहते हैं। इसलिए हमारा प्रस्ताव एक सौहृदयता की भावना में पेश किया जाएगा और हमें आशा है कि चीन भी इस प्रस्ताव का प्रतिदान ऐसी ही सौहृदयता से करेगा।

अपने अद्वितीय इतिहास एवं गहरी धार्मिक परम्परा के कारण मेरा देश एशिया के मध्य में एक शांति क्षेत्र बनने की आदर्श स्थिति में है। एक निष्पक्ष बफर-स्टेट का इसका ऐतिहासिक दर्जा फिर से इसे लौटाया जाना चाहिए। इससे इस सारे भूखण्ड में स्थाई शांति स्थापित होगी। शांति एवं सुरक्षा की एशिया को ही नहीं बल्कि सारे विश्व

को ज़रुरत है, उसे बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ज़रुरी नहीं भविष्य में तिब्बत एक अधिकृत क्षेत्र रहे, जिसे बल पूर्वक दबाया जाता रहे, बांझ और यातनाओं से झलसा हुआ। यह पृथ्वी पर ऐसा स्वर्ग बन सकता है जहाँ हर कोई आ सकेगा, जहां मानवता एवं प्रकृति एक सुन्दर ताल मेल में रह सकेंगे। विश्व के अनेकोंनेक क्षेत्रों के तनावों को दूर करने के लिए वह एक रचनात्मक उदाहरण होगा। चीनी नेताओं को स्वीकारना होगा कि अधिकृत क्षेत्रों पर उपनिवेशवादी शासन करने का समय कब का बीत चुका। एक बड़ा एवं वास्तविक संघ या संगठन स्वेच्छा से ही बन सकता है, दबाव एवं ज़बरदस्ती से नहीं, जब सभी पक्षों को बराबर हित मिलें। युरोपियन समुदाय इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। दूसरी तरफ, एक राष्ट्र एवं समुदाय टूट कर दो या दो से ज्यादा ईकाईओं में भी बदल सकता है, यदि विश्वास के तार टूट जाएं, यदि परस्पर हितों का स्थान लोभ ले ले या फिर केवल बल ही शासन करने का एक-मात्र उपाय बना लिया जाए।

मैं अपनी बात को, यूरोपियन पार्लिमैंट के सम्मानित सदस्यों के सामने यह अपील रख कर खत्म करूंगा (तथा उनके माध्यम से उनके अपने अपने राष्ट्रों व क्षेत्रों को भी) कि वह हमारी कोशिशों में हमसे पूरा सहयोग करें। तिब्बती समस्या का समाधान इस प्रस्ताव के सांचे में जो हमने पेश किया है, वह केवल तिब्बतियों के हित में नहीं केवल चीनियों के हित में नहीं, बल्कि क्षेत्रीय, विश्व शांति, विश्व हित एवं स्थाईत्व में भी महत्व पूर्ण योगदान होगा।

मैं आप लोगों का धन्यवादी हूं कि आपने मुझे अपने विचार आपसे सांझे करने का अवसर दिया। □

दलाई लामा का ऐतिहासिक प्रस्ताव

यूरोपीय संसद के सामने बोलते हुए जो ऐतिहासिक प्रस्ताव दलाई लामा जी ने रखा है, उसे यदि चीन मंजूर कर ले तो यह एक क्रांतिकारी घटना होगी, जिसका महत्व गोर्बाचौफ के पेरेस्त्रोएका अभियान से किसी कदर कम नहीं होगा लेकिन क्रांतियां क्योंकि हर दिन नहीं होती, इस लिए यह उम्मीद करना कठिन है कि पेइचिंग के शासक तिब्बत के बारे में दलाई लामा की बातें मान लेगें।

क्रांति किसे कहते हैं? जब सोच विचार के पुराने खांचे बदलते हैं और नई श्रेणियां जन्म लेती हैं, तो क्राँति होती है। मिख़ाइल गोर्बाचौफ साम्यवाद की सत्तर साल पुरानी शक्ल बदल रहे हैं। और रूस के शरीर में वे मानों साँस लेने के लिए नए फेफड़े लगा रहे हैं। साम्यवाद 20वीं सदी में जन्मा पृथ्वी का अन्तिम धर्म था, और 1917-55 के बीच लगता था कि एक पुस्तक, एक चर्चा और एक पार्टी-पोप की दुहाई देते हुए वह किसी दिन सारे संसार पर अवश्य छा जाएगा। 1955 के बाद यह उम्मीद ख़त्म हो गई, लेकिन कई वर्षों तक मौस्को के मन में यह भ्रम बना रहा कि सम्यावाद अब भी भविष्य की लहर है। गोर्बाचौफ उस भ्रम को दफ़ना रहे हैं। जो विचारधारा सारे पुराने धर्मों को ख़त्म करके भविष्य की मानवता का शाश्वत धर्म बनती लगती थी, वह 70 साल में ही इस तरह अस्त हो जाएगी, यह किसने सोचा था?

और दलाई लामा जी क्या सुझा रहे हैं? वे कह रहे हैं कि रक्षा और विदेश नीति की दृष्टि से तिब्बत चीन का एक अंग अवश्य रहे लेकिन अन्य सब मामलों में उसे आँतरिक स्वशासन दे दिया जाए। तिब्बत का अपना संविधान हो, धार्मिक आज़ादियां हों, चुनाव-प्रणाली हो, न्यायपालिका हो, विधान सभाएं हों, चुना हुआ नेता हो रक्षा का ज़िम्मा चीन का हो पर तिब्बत को युद्ध-क्षेत्र न बनाया जाए। तिब्बत में परमाणु बम और प्रक्षेपास्त्र न हों और फौज की अगली पंक्तियां न

हों। अर्थात जैसे 1949 के पहले तिब्बत एक निर्राष्ट्र इलाका था वैसा ही पुनः बन जाए। हां, 20वीं सदी के आग्रहों के कारण यदि एक राष्ट्रावरण एवं सेन्यावरण आजकल सर्वत्र ज़रुरी है, वह चीन तिब्बत को दे सकता है।

विदेश नीति चीन के ज़िम्मे सौंपते हुए दलाई लामा जी चाहते हैं कि तिब्बत का अपना एक वैदेशिक दफ्तर हो, जो व्यापार, शिक्षा, संस्कृति, धर्म, पर्यटन, खेल आदि मामलों में विदेशों से सीधा सम्पर्क रखे। अर्थात विदेश नीति का जोखिम भरा राजनैतिक पहलू चीन की देखरेख में जा सकता है, लेकिन उसका निरापद सांस्कृतिक एवं मानवीय पहलू तिब्बत के पास रहना चाहिए।

हांगकांग के मामले में चीन ने मान लिया कि 1997 के बाद एक चीनी म्यान में दो किस्म की चीनी तस्वीरें होंगी। यही बात क्या वह ताईवान (फारमोसा) और तिब्बत के बारे में भी मान लेगा? यदि तिब्बत, ताईवान और हांगकांग के साथ चीन ने ढीला संघीय रिश्ता बनाया, तो फिर सिकियोग और मंगोलिया को अन्दरुनी आज़ादी माँगने से कैसे रोका जा सकेगा?

दलाई लामा जी के प्रस्ताव को हमने क्रांतिकारी कहा है, क्योंकि यदि तिब्बत और चीन के रिश्ते बदल गए, तो दुनिया में राष्ट्रवाद का चेहरा-मोहरा ही बदल जाएगा। जैसे गौर्बाचौफ साम्यवाद की पुर्नरचना कर रहे हैं उसी तरह चीन के शासक राष्ट्रवाद को अवधारणाओं को उलटा-पुलटा करके रख देगें। कहना न होगा कि राष्ट्रवाद के महल में यह यदि खुली हवाऐं बहने लगीं, तो आज की दुनिया के 90 प्रतिशत तनाव नज़र ही नहीं आएंगे। तिब्बत यदि चीन से कस कर बंधा हुआ न हो तो इसका क्या असर कश्मीर या भूटान या अज़रबाएजान या करेन-काचिन इलाकों पर पड़ेगा, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है।

राष्ट्रवाद को भी एक ग्लासनोस्त की ज़रुरत निश्चित ही है। दरअसल जब 1947 के आर्दशवादी माहौल में भारत को आज़ादी मिली थी, तब गांधी का यह देश एक खुले और उदार, राष्ट्रवाद के लिए तैयार था जो अर्न्तराष्ट्रीयता के दावों को भी खुले मन से स्वीकार

कर रहा हो, ओर आंचलिकता के दावों को भी ! नेहरु ने यदि हिमालय का चप्पा-चप्पा सेना और प्रशासन के दायरे में लाने की ताबड़ तोड़ कोशिश नहीं की, तो इसकी वजह यह थी कि एक कमोबेश निसैन्य, निर्राष्ट, निस्सीम, सरहदी अपरिभाषा से हमें कोई एतराज़ नहीं था। भारत के उदार राष्ट्रवाद को संकुचित बनाया परिस्थितियों ने। बंटवारे की प्रक्रिया ने हमें बहुसंख्या अल्पसंख्या का बोध दिया, चीन के हमें सीमा बोध दिया। अमेरिका और पाकिस्तान के गठबन्धन ने हमें अन्तर्राष्ट्रीय गुटबंदी के खतरों का बोध दिया। इस प्रकार जो देश राष्ट्रवाद तक को भी कट्टरता से नहीं अपनाना चाहता था, उसे अन्ततः इस मामले में कट्टर बनना ही पड़ा।

चीन तो हमसे भी सौ गुणा कट्टर हर मामले में है। क्या वह मन्जूर करेगा कि वह राष्ट्र भी है और राष्ट्रसंघ भी। माना तो लेनिन ने भी था, लेकिन राष्ट्रवाद के बाज़ूबन्द खोलने का काम कोई साम्यवादी देश क्या आज तक कर पाया ? जो देश इस्लाम का नाम लेते हैं, वे इस्लाम को राष्ट्रवाद की एक और सबल हथकड़ी ज़रुर बनाना चाहते हैं, लेकिन क्या कोई ऐसा इलाका है जहां राष्ट्रवाद की जकड़न इस्लाम ने ढीली की हो ? यदि भविष्य में उसने यह काम किया तो इस्लाम संसार के इतिहास में वह भूमिका अदा करेगा, जो साम्यवाद अथवा गांधीवाद करना चाहते थे लेकिन नहीं कर सके। लेकिन पश्चिम के भरोसे तिब्बत कब तक प्रतीक्षा करे ?

इतिहास क्या करेगा, यह कोई नहीं जानता लेकिन दलाई लामा जी ने एक चुनौती भरा पांसा फेंका है, वे चाहते तो अन्त तक अड़े रहे सकते थे कि हमें सार्वभौम, स्वतंत्र तिब्बत ही चाहिए। लेकिन राष्ट्रवाद की उग्र श्रेणियों को त्याग कर वे रिश्तों को तरलता की ओर मुड़े हैं। यह तरलता क्योंकि तिब्बत के स्वतन्त्र राष्ट्र बन जाने से भी अधिक सार्थक है, इसलिए वह क्रांतिकारी है। अलग हो कर बराबर होना तो सभी जानते हैं, लेकिन जुड़ कर बराबर होने के रास्ते दुनिया खोजेगी तो ही 21वीं सदी 20वीं सदी से भिन्न साबित हो सकेगी। □

संपादकीय : नवभारत टाईम्स
20 जून: नई दिल्ली

इंडियन एक्सप्रैस का संपादकीय

स्ट्रासबर्ग जहां यूरोपियन पार्लिमेंट स्थित है, में दिया गया भाषण महत्वपूर्ण है। दलाई लामा जी ने तिब्बत के भविष्य के बारे में कुछ दूरगामी प्रस्ताव दिए हैं। तिब्बत के धार्मिक नेता के यह प्रस्ताव, पिछले सालों की स्थिति से काफी भिन्न हैं। वह स्वंय इन्हें "मध्यम या नरम" कहते हुए यह ज़रुर दावा करते हैं कि यह प्रस्ताव पेश करते हुए वह "व्यवहारिक" रुख अपना रहे हैं। चीनी सरकार के हाल ही के व्यवहार का, जिस के अर्न्तगत वहां हो रहे विरोध प्रदर्शनों के प्रति सामान्यत: सहज ही है, उनका मूल्यांकन यह है कि तिब्बत प्रश्न पर भी उसकी पुरानी अकड़न नरम हुई होगी।

चीनी दृष्टिकोण से भी उनके प्रस्ताव, संघर्ष को आगे बढ़ाने वाले हैं क्योंकि अब वह तिब्बत-आजादी नहीं, स्वशासन योजना को सामने रखे हैं। अभी तक तिब्बत नाममात्र का ही स्वराजित क्षेत्र है। तिब्बतियों के सांस्कृतिक एवं राजनैतिक अधुनिकीकरण की चीनी नीति का दरअसल कोई आधार नहीं था, न समर्थन ही हुआ। अधिकतर तिब्बतियों में इस कारणवश भी अलगाव भावना आ गई क्योंकि वहां पर हॉन-चीनियों को लाकर बसाया जाने लगा। निष्कासित तिब्बतियों के अनुसार ऐसे हॉन-चीनी इतनी ज़्यादा संख्या में बस गए हैं कि तिब्बत में उनकी संख्या 60 लाख तिब्बतियों से कहीं ज़्यादा हो गई है। यह है सच्चाई जिस के कारण चीनियों पर मूल तिब्बती अस्तित्व को तबाह करने का दोष लगाया गया है।

तिब्बत क्षेत्र के लिए स्वशासित प्रजातांत्रिक राजनैतिक अस्तित्व प्रस्तावित करने के साथ ही साथ दलाई लामा जी ने यह स्वीकार किया है कि तिब्बत की विदेश-नीति का दायित्व चीन का ही होगा। परन्तु उनकी यह मांग "अन्तत: तिब्बत से सेना पूर्णतया हटा ली जाएगी

तथा उसे निष्पक्ष क्षेत्र घोषित कर दिया जाएगा" से चीनी भड़क भी सकते हैं। और ऐसा तो हो नहीं सकता कि दलाई लामा जी इस बात से अनभिज्ञ हों। उनका करीबी उद्देश्य, किसी भी प्रकार से यह पता करना लगता है कि चीनी उनके साथ समझौता-वार्ता करने के मूड में हैं या नहीं। तिब्बत की विदेश नीति बीजिंग में बैठे अधिकारियों द्वारा चलाई जाएगी, यह वास्तव में चीनियों के साथ बातचीत करने के उद्देश्य से एक तरह की गाजर है। इसे, देखना भर शेष रह गया है।

काफी कुछ इस बात पर भी निर्भर होगा कि चीनियों ने यह स्वीकार कर लिया है कि पांचेन लामा को ऊंची पदवी देकर, तिब्बतियों का विश्वास ग्रहण करने की उनकी कोशिश पूरी तरह असफल हो चुकी है। सोवियत रुस में, आर्मेनिया तथा अज़ेरबाएजान में भड़के ताज़ा प्रांतीय दंगे भी चीन की आंखें खोलने में सहायक होगें तथा उनकी छाया में वह तिब्बत को वास्तविक स्वराज्य (औटोनमी) देगा, अगले दिनों में यह देखना काफी रोचक एवं महत्वपूर्ण होगा। □

जून 18, 1988

टाईम्स ऑफ इन्डिया का संपादकीय

दलाई लामा जी द्वारा तिब्बत के भविष्य के प्रति दिए प्रस्ताव के जबाव में चीन ने अपना जाना पहचाना रवैया फिर यह कह कर व्यक्त किया है कि "तिब्बत चीन का अंदरुनी मामला है।" परन्तु जबकि कोई भी सरकार चीन के तिब्बत पर प्रभुत्व को नहीं ललकारती तो इसका यह मतलब कतई नहीं लगाया जाना चाहिए कि वहां पर चीन तिब्बतियों के साथ जो कुछ भी कर रहा है, दुनिया उस के प्रति भी चुप रहेगी। चीनी, प्रभुत्व की जो परिभाषा देते हैं वह बाकी के विश्वसमाजों को कतई मान्य नहीं है। ऐसा यदि न होता तो श्रीमान गोर्बाचोव प्रैज़िडैंट रीगन को मौस्को यूनिवर्सिटी में शिक्षार्थीओं को तथा डिस्सिडैंट्स (सत्ता विरोधियों) के साथ मानवाधिकारों पर बातचीत न करने देते। इसके उलट निष्कर्श, इस तथा ऐसे अन्य उदाहरणों से नहीं निकाले जाने चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों का अध्ययन करने वाला कोई भी यह तर्क नहीं दे सकता है कि राष्ट्रों के प्रभुत्व को ऐसे राष्ट्रों में सत्ता विरोध भड़का कर नकारा जा सकता है जो संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार घोषणा पत्र के अनुसार नहीं चल रहे। ऐसे हस्तक्षेपों के लिए कुछेक सरकारें तो बदनाम हैं ही, लिबिया उदाहण-स्वरुप। हमारा पड़ोसी पाकिस्तान, जिसने पंजाब क्षेत्र में आंतकवादियों को खुलेआम हथियार एवं आर्थिक सहायता देना अपना खुला हक समझा है। चीन का अपना रिकार्ड भी काफी गिरा हुआ है और इन सबके ऊपर अमेरिका जो लुके छुपे ढंगों से ऐसी सरकारों को हिलाता गिराता रहता है, जो उसे नहीं सुहाती। बेशक कोई भी अन्तर्राष्ट्रीय पद्धति इस तरह के हस्तक्षेपों में नहीं खड़ी रह सकती। हमें ऐसे किसी मध्य मार्ग पर चलना होगा जो राष्ट्रीय प्रभुत्व तथा मानवाधिकारों के प्रति बढ़ रही रुचि दोनों का समावेश कर सके।

चीनियों को कहीं बाहर जाकर ढूंढने की कतई आवश्यकता नहीं

कि वे तिब्बत में क्या कर रहे हैं, बहुत गिरा हुआ रिकार्ड है उनका वहां। उनकी अपनी नेता मंडली जिसमें तेंग शिओपिंग भी हैं, ने स्वीकारा है कि तिब्बत में उनसे ज़्यादतियां हुई हैं। दलाई लामा जी ने 1950 के चीनी कब्ज़े के बाद वहां मरने वालों के आंकड़े दिए हैं। यह संख्या दस लाख से उपर जाती है जो वहां की कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत है। कितने भयानक हैं यह आंकड़े कि एक देश की कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत भाग आधुनिक युग में एक विश्वशक्ति खत्म कर चुकी है। इतनी ही हैबतनाक है वहां पर मौनेस्ट्रीज़ (बौद्ध-मंदिरों) की तबाही, जो कि कभी लगभग 6000 हुआ करते थे। सीधे से कहा जाए तो यह एक अनोखी संस्कृति को मिटा देने के बराबर वाली गन्दी कोशिश है। तिब्बत एक राष्ट्र से भी बढ़ कर है, विश्व की महान् सभ्यताओं में से एक। चीन का यह निजी दायित्व है, कर्त्तव्य है कि वह उसे उसकी अपनी मनीषा, संचालक शक्ति के आधार पर बढ़ने दे, रहने दे। इससे उसका अपना चीनी परिवार ही बड़ा होगा, समृद्ध होगा। अगर गुज़रे वक्तों में चीनियों ने अन्य क्षेत्रों में उदारता दिखाई है तो ऐसा वह एक बार फिर सकते हैं, विशेष कर अब जबकि वह खुद अपनी आत्मा, जो मार्क्सवाद के कचरे तले 25 सालों से दबी थी, को निकाल रहे हैं। दलाई लामा जी ने खुलेआम कहा है कि यदि चीनी अपनी भूमिका ढंग से निभाते हैं तो वह भी पीछे नहीं हटेंगे। ल्हासा से 1959 में आने के बाद, पहली बार उन्होंने कहा है कि वह तिब्बत के लिए ऐसा दर्जा स्वीकार कर लेगें जिसके अन्तर्गत विदेश-नीति बीजिंग के हाथों में होगी। हम आशा ही कर सकते हैं कि चीनी उनके इस प्रस्ताव को नकार न दें और उनके साथ बातचीत शुरू करें। पुराना चीन, पुराने यूरोप की भांति कभी उन इलाकों में कत्लेआम नहीं करता था जिन पर उसने अधिकार किया होता था। आधुनिक चीन को भी कोई आवश्यकता नहीं कि वह अपनी महानता के लिए तिब्बतियों की बलि चढ़ाए। □

जून 14, 1988

तिब्बत पर सरदार वल्लभभाई पटेल का पं. नेहरू के नाम पत्र

नई दिल्ली
नवम्बर, 1950

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

अहमदाबाद से लौटने, तथा उसी दिन की कैबिनेट मीटिंग के जहाँ मुझे आने के 15 मिनट बाद ही जाना पड़ा, मैं बड़ी व्याकुलता से तिब्बत समस्या पर सोचता रहा हूं, तथा अब सोचा कि जल्दी तुमसे वह सांझा करूं जो मेरे दिमाग में कुनकुना रहा है।

मैंने पेकिंग में अपने राजदूत तथा अपने विदेश मंत्रालय के बीच चल रहे पत्राचार को ध्यान से पढ़ा है। उन पत्रों को भी, जो चीनी सरकार उसे पेकिंग में लिखती है। उसके आधार पर मैंने अपने राजदूत तथा चीनी सरकार से भी बड़ी सौहृयता से पत्राचार किया है। मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि उस सब का कोई लाभ नहीं हुआ है। चीनी सरकार हमें अपने शांतिपूर्ण उद्देश्यों के आडम्बर में उलझाती जा रही है। मेरा विचार है कि उन्होंने हमारे राजदूत को, तिब्बती समस्या को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने के थोथे भ्रम से भर दिया है। कोई संदेह नहीं कि पत्रों का यह आदान-प्रदान जिन समयों में चला होगा चीनी, तिब्बत पर हमला करने ही वाले होंगे। चीन की अंतिम चाल, मेरे से पूछा जाए तो कपट और विश्वासघात जैसी ही है। ट्रैजेडी यह है कि तिब्बतियों ने अपना सारा विश्वास हमारे ही कहने पर हम पर ही छोड़े रखा। हम ही उनका मार्गदर्शन भी करते रहे हैं, और अब हम उन्हें चीनी कूट-नीति तथा दुष्ट भावों के चक्रों में से बचा नहीं पा रहे हैं। ताज़ा प्राप्त सूचनाओं से ऐसा लग रहा है कि हम दलाई लामा जी को भी वहाँ से नहीं निकाल पाएगें। यदि चीनी सोचते हैं कि हमारी तिब्बत में रूचि रखने से उसे भारत-अमेरीकी गुट से खतरा है तो यह हास्यास्पद ही है। परन्तु इससे तो मैं यही समझूंगा कि वह हमें अमेरिका के पिठ्ठू के रूप में ही देखते रहे हैं। आप द्वारा आरम्भ किए गए

सीधे-सम्बन्धों के बावजूद भी ऐसा घट रहा है, तथा संकेत मिल रहे हैं कि आपकी मार्फ़त हम ही स्वंय को चीनियों का मित्र समझे जा रहे हैं जब कि चीनी ऐसे किसी भ्रम का शिकार नहीं लगते। अपनी कम्युनिस्ट मानसिकता के आधार पर, जो कहती है "जो भी हमारे साथ नहीं, हमारा शत्रु है," यह एक महत्वपूर्ण संकेत है जिस पर हमें अभी ही ध्यान देना होगा। कुछ महीनों से सोवियत गुट से परे हो, हम ही केवल अकेले थे जिन्होंने चीन को यू.एन.ओ की सदस्यता दिलवाने की कोशिशें कीं तथा फारमूसा के प्रश्न पर अमेरीका से कुछ न करने का विश्वास भी लिया। चीनियों की भावनाओं को निश्चित करने के लिए हमने सब कुछ किया है। उसकी सदस्यता के लिए अमेरिका, ब्रिटेन इत्यादि से किया गया पत्राचार भी उन्हें दिखाया है। इस सब के बावजूद भी चीन को हम पर भरोसा नहीं, हमें शक में रखे है वह तथा उसका हमारी ओर से सारा मनोविज्ञान शत्रुतापूर्ण ही है। कम से कम प्रत्यक्ष रूप से तो ऐसा ही लगता है मुझे। और मुझे शक है कि उसे विश्वास दिलाने के लिए जितना कुछ हम कर सके हैं उससे अधिक और कुछ नहीं हो सकता। उसे अपनी निष्कपट भावनाओं, मैत्रीपूर्ण उद्देश्यों को बताने के लिए इससे अधिक हम और कुछ नहीं कर सकते। पेकिंग में हमारा राजदूत, जो विद्वान और कुशल ही नहीं, दोस्ताना सम्बन्धों को बढ़ाने के लिए आदर्श व्यक्ति है, वह भी चीनियों के मन को साफ करने, उन्हें विश्वास दिलाने में असफल हो गया है। उनकी ताज़ा टेलीग्राम अभद्रता का नमूना है। जिसमें हमारे उस विरोध को, कि उनकी फौजें तिब्बत में क्यों घुस रही हैं, चीनियों ने विदेशी शक्तियों के दबाव में आकर दिया गया विरोध पत्र कहा है। उनकी टेलीग्राम की भाषा साफ बताती है जवाहरलाल की यह किसी दोस्त की नहीं, भावी शत्रु की भाषा है।

इस सब के पटाक्षेप में, हमें इस नई स्थिति को देखना, सम्भालना होगा जिस में तिब्बत तो गायब हो ही जाएगा जिसका हमें पता था, चीन का हमारे दरवाज़ों तक फैलाव भी शामिल है। इतिहास में ऐसा कभी कोई पल हमें याद नहीं जबकि हमें अपनी उधर की उत्तरपूर्वी सीमा की चिन्ता हुई हो। उत्तर में खड़े हिमालय पर्वत उधर से आने वाले किसी भी ख़तरे के प्रहरी से लगते रहे हमें। फिर तिब्बत हमारा दोस्त था जिसने हमें कभी किसी समस्या में नहीं डाला—

1914 में हमने उस के साथ एक समझौता किया था जिससे चीन सहमत नहीं था"। तिब्बत के साथ हमने स्वतन्त्र सन्धि कर उसे एक स्वतन्त्र राष्ट्र तो माना ही था, बस चीन के ही हस्ताक्षर चाहिए थे हमें। चीन की, आधिपत्य (सूज़रेनेटी) के प्रश्न पर परिभाषा अपनी ही है, भिन्न है। सो हमें तैयार रहना चाहिए कि जल्दी ही तिब्बत के साथ जो भी समझौते इत्यादि हमने किए हैं, चीन उन्हें एकदम नकार देगा। और व्यापार तथा सीमा-सम्बन्धी जो भी हमारे समझौते तिब्बत के साथ पिछले वक्तों में हुए, उन्हें तो गया ही समझो। हिमालयी क्षेत्र जो हमारी तरफ के हैं, वहां बसे मंगोल तथा चीनी वंशों के लोग कभी भी समस्या का कारण बन सकते थे। सो चीन के इरादे हमारी तरफ वाले हिमालयी इलाकों तक ही नहीं हैं, वह आसाम तक भी नज़र रखे हुए है। बर्मा पर भी उसकी नज़र है। शताब्दीयों पश्चात एक बार फिर भारत की सुरक्षा को दो मोर्चों पर ध्यान देना होगा। अभी तक हमारे सुरक्षा प्रयास पाकिस्तान से बेहतर रहने में लगे हुए थे। मेरे पूर्व विचार अनुसार अब हमें उत्तर तथा उत्तर पूर्व में कम्यूनिस्ट चीन का ख्याल रखना होगा, ऐसा कम्यूनिस्ट चीन जिसके निश्चित इरादे हैं तथा जो हमारे लिए किसी तरह की दोस्ती का दम भरता नहीं लगता।

अब हमें इस सीमा से लगने वाले अन्य क्षेत्रों की राजनैतिक स्थिति का मूल्यांकन करना होगा। हमारे उत्तरी तथा उत्तरपूर्वी क्षेत्रों में नेपाल, भूटान, सिक्किम, दार्जिलिंग तथा आसाम के आदिवासी क्षेत्र पड़ते हैं, जहाँ से चीन आ सकता है। उधर हमारे साधन बड़े कमज़ोर व अपर्याप्त हैं, सो यह क्षेत्र "कमजोर" हैं। कोई लगातार मोर्चे भी नहीं हैं उधर, इसलिए घुसपैठ के अनेकों-अनेक रास्ते हैं। उधर की हमारी चौकियों पर भी कोई लगातार तो बैठता नहीं, कभी ज़रूरत ही नहीं थी पड़ी। वहां के बसे लोगों को, जो मूलत: मंगोल हैं, भारत से देश-भक्ति दिखने का कोई कारण भी नहीं है उनके पास। कालिम्पांग क्षेत्र भी अस्थिर से हैं। मैंने श्री आएंगर को पहले ही उन इलाकों की गुप्तचर रिर्पोटों का मूल्यांकन करने को कह दिया है ..

मैं सुझाव देता हूं कि हम एक खुला विचार-विमर्श करने के लिए जल्दी ही मिलें तो बेहतर होगा ताकि ताज़ा उठी इन समस्याओं पर बातचीत कर हम कुछ ऐसे निर्णय ले सकें जो हमें लगे कि एकदम ज़रुरी हैं।

तुम्हारा ही

वल्लभभाई पटेल

चीनी जनसंख्या स्थानांतरण व उसके भयंकर परिणाम

7.5 मिलियन हॉन चीनी तिब्बत में अब तक बसाए जा चुके हैं जबकि तिब्बत में मूल तिब्बतियों की जनसंख्या केवल 6.0 मिलियन है। तिब्बत में यह दोनों निम्नलिखित ढंग से बसे हुए हैं :--

		तिब्बती	चीनी
1.	केन्द्रीय तिब्बत (जिसे तिब्बत औटोनोमस क्षेत्र कहते हैं)	1.9 मिलियन	2 0 मिलियन से भी ज्यादा
2.	आमदो (जिसे अब किंगहाई का नाम दिया जा चुका है)	0.8 मिलियन	2.5 मिलियन
3.	खम (जिसे सिचुआंन, यूनान, गांसू क्षेत्रों में बांटा गया है)	3.3 मिलियन	3.0 मिलियन

(एक मिलियन=10 लाख)

□अकेले ल्हासा में ही 100,000 चीनी नागरिक जनसंख्या है जबकि वहां केवल 50,000 तिब्बती रहते हैं। चीनियों के वहां इतनी बड़ी संख्या में आ बसने से 30,000 तिब्बतियों की नौकरियां नए बसाए गए चीनियों को दे दी गई हैं।

□चीनियों की यह वर्तमान नीति 1963 से शुरू की गई जिसे तिब्बत समस्या को खत्म करने के लिए "आखरी हल" का नाम दिया गया था।

□श्री तेंग शिओपिंग तथा अन्य चीनी अधिकारियों ने यह स्वीकार किया है कि चीनी जनता को तिब्बत में जाकर बसने के लिए खुलेआम प्रेरित किया जाता है—सबसिडिएरीज़, ऋण तथा ज़मीन सम्बन्धी अन्य लालच देकर।

□चीन की यह नीति जिनेवा कान्वेंशन के आर्टिकल 49 (1949) का उल्लंघन करती है, जिसके अन्तर्गत बलात् कब्ज़ा करने वाली शक्ति, अधिकृत क्षेत्रों से अपनी नागरिक जनसंख्या को नहीं बसा सकती।

□चीन की इस जानी पहचानी नीति से तिब्बत का अस्तित्व ही खत्म हो सकता है यदि यह नीति सफल हो जाती है। वहां से आने वाली खबरों से तो यही लगता है कि यह नीति सफल हो रही है। तिब्बत से परे चीन के अपने अन्य क्षेत्रों में भी यह हाल है कि अब वहां 35 चीनियों के मुकाबले 1 मांचू, 3 चीनी 1 तुर्की, 5 चीनी 1 मंगोल बचे हैं।

□तिब्बती जनसंख्या को कन्ट्रोल करने के लिए चीनी जो ढंग अपनाते हैं, वह हैं—अस्पतालों, सरकारी क्लिनिकों में जिंदा जन्में बच्चों को मृत बताना, डिलिवरी के दौरान ही नसबन्दी कर देना, बच्चादानी, औरतों के अण्डकोषों को स्थाई रूप से बेकार कर देना, गर्भाश्य को निकाल देना इत्यादी। (12 लाख से भी ज्यादा तिब्बती अब तक चीनी शासन के दौरान मारे जा चुके हैं।)

ब्योरा	यूत्सांग	ख़म	आम्दो	कुल
जलों तथा लेबर कैम्प में मरे	93,477	64,877	14,784	173,138
फांसीं अथवा वध	28,267	32,266	96,225	156,758
युद्ध में मारे गए	143,255	240,410	40,042	432,707
भूख से मरे	131,253	89,916	121,982	343,151
यातनाओं से मरे	27,951	48,840	15,940	92,731
आत्महत्याएं	3,375	3 952	1,675	9,003
कुल	427,578	480,261	299,648	1,207,488

(न्यूयार्क टाईम्स जून 87, दि इक्नोमिस्ट: 15 जून 86, श्री वॉनवैल्ट प्राग न्यूयार्क 87, यू. एन कमिशन ऑन ह्यूम्न राईट्स 87 तथा तिब्बती सुरक्षा कार्यालय से प्राप्त आँकड़ों पर आधारित)। □

"मैं जो कुछ कहता या प्रचारित करता हूँ वह भारत की ही देन है, उसमें मेरा अपना कुछ भी नहीं है। भारतीय मनीषियों के शांति, करूणा और मैत्री के सिद्धान्तों को इस पीढ़ी तक पहुँचाने का मैं माध्यम मात्र हूँ"

दलाई लामा

इन्फर्मेशन एवं इंटरनेशनल रिलेशन्स विभाग, केन्द्रीय तिब्बती सचिवालय,
गंगचेन किशोंग, धर्मशाला (हि. प्र.)
मुद्रक : हीरो प्रिंटर्ज, धर्मशाला (हि. प्र.) फोन : 2388